SHODH SAMAGAM

ISSN : 2581-6918 (Online), 2582-1792 (PRINT)

भारतीय महिला उपन्यासकार और नारी विमर्श

लक्षेश्वरी, पीएच–डी, हिन्दी विभाग,
किरोड़ीमल शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रायगढ़, छत्तीसगढ़, भारत

ORIGINAL ARTICLE

Author
लक्षेश्वरी, पीएच–डी
E-mail : laksheshwarikurre@gmail.com

shodhsamagam1@gmail.com

Received on : 20/01/2026
Revised on : 21/03/2026
Accepted on : 30/03/2026
Overall Similarity : 00% on 22/03/2026

Plagiarism Checker X - Report
Originality Assessment
0%
Overall Similarity

Date: Mar 22, 2026 (12:49 PM)
Matches: 0 / 2557 words
Sources: 0
Remarks: No similarity found, your document looks healthy.
Verify Report: Scan this QR Code

शोध सार

नारी विमर्श की अवधारणा आधुनिक युग की देन है। भारतीय महिला उपन्यासकारों का नारी विमर्श महत्वपूर्ण और प्रभावशाली है। आज का नारी लेखन एक नवीन ऊर्जा के साथ आगे बढ़ रहा है। महिला उपन्यासकारों के उपन्यासों में नारी विमर्श के कई प्रकार देखने को मिलता है जैसे– उदारवादी नारीवाद, मार्क्सवादी नारीवाद, कट्टरपंथी नारीवाद, सांस्कृतिक नारीवाद, पर्यावरण नारीवाद आदि। लेखिकाओं ने नारी जीवन की समस्याओं का यथार्थपरक चित्रण कर उनका समाधान मानवीय दृष्टिकोण से करने का सफल प्रयास किया है। इनकी रचनाओं में सामाजिक, धार्मिक, दार्शनिक एवं आर्थिक मूल्यों में परंपरा और रुढ़ियों के प्रति विरोध स्पष्टतः दिखाई देता है। वर्तमान समय में नारी शिक्षा ग्रहण कर अपने अधिकारों के प्रति सचेत हो गई हैं। अपने जीवन का हर फैसला स्वयं लेना सीख गयी है। नारी चिंतन मनन करने लगीं है। उनको समझ में आने लगा है कि जब तक वे स्वयं को देह से आगे न समझकर अपने अस्तित्व, व्यक्तित्व एवं अस्मिता को समाज के सामने स्थापित नहीं करेंगी तब तक पुरुषवादी समाज उसे सिर्फ देह मानकर दासता भरा जीवन जीने के लिए बाध्य करता रहेगा। स्त्री की पहचान को मजबूती दिलाने का कार्य नारी विमर्श कर रही है। यह शोधालेख हिन्दी साहित्य जगत की प्रमुख नारीवादी महिला साहित्यकार कृष्णा सोबती, प्रभा खेतान, मैत्रेयी पुष्पा, मृदुला गर्ग, उषा प्रियंबदा, ममता कालिया आदि के लेखन में नारी विमर्श का विविध स्वरुप के दर्शन कराता है।

मुख्य शब्द

महिला उपन्यासकार, नारी विमर्श, पितृसत्तात्मक समाज.

प्रस्तावना

नारी विमर्श की अवधारणा आधुनिक युग में पाश्चात्य देशों की देन है ऐसा माना जाता है। नारीवादी सिद्धांतों का मुख्य उद्देश्य समाज में व्याप्त लैंगिक असमानता की प्रकृति एवं उसके कारणों को समझकर लैंगिक भेदभाव की राजनीति एवं शक्ति संतुलन के सिद्धांतों पर पड़ने वाले प्रभाव की व्याख्या करना है। नारी विमर्श के मूल में नारी चेतना की खोज, नारी अस्मिता की तलाश और नारी के प्रतिष्ठा का संकल्प है। स्त्री के स्व की पहचान लिंग, जाति, धर्म, समाज, राष्ट्र, देश, बोली और व्यवसाय के आधार पर किया जाता है। लिंग भेद की राजनीति स्त्री को अलग–अलग क्षेत्रों में अलग–अलग प्रकार से प्रभावित करती है। परिस्थितियों और देश काल के अनुसार नारी विमर्श को अलग–अलग कर के समझा जा सकता है। नारी विमर्श एकरुप नहीं है, उसकी कई परिभाषाएं और व्याख्याएं है। नारी विमर्श एक विचारधारा है जिसने सदियों से चली आ रही पुरुषसत्तात्मक समाज की व्यवस्था को चुनौती देते हुए नारी मुक्ति के मार्ग को प्रशस्त किया है।

नारी लेखन को मनोरंजन का लेखन कहे जाने के संबंध में सुधा अरोड़ा अपने साक्षात्कार में कहती है कि–''एक समय था, जब महिलाओं के लेखन को घर–परिवार की चहारदीवारी में कैद और समाज की प्रमुख समस्याओं से कटा हुआ फुरसती लेखन मानकर उसे एक विशिष्ट (या दोयम) दर्जा देकर उसके साथ रियायती बर्ताव किया जाता था। यह कुछ–कुछ वैसी ही स्थिति थी, जैसे तीन दशक पहले मराठी में दलित साहित्य को सवर्णों द्वारा हेय दृष्टि से देखा जाना। आज वही दलित साहित्य मराठी साहित्य के मेनस्ट्रीम में शामिल हो चुका है। यह सुखद है कि महिलाओं द्वारा रचे गये साहित्य का पिछले कुछ वर्षों से ऊर्ध्वमुखी विकास इस वक्तव्य को खरिज करता है कि पढ़ी–लिखी उच्च मध्यवर्गी महिलाएँ दुपहर की फुरसत में कलम घसीटती हैं या चित्रकारी करती हैं (खैरनार, 62)।'' पूर्व में निर्मित धारणाओं को लेखिकाओं ने खंडन कर साहित्य में अपना महत्वपूर्ण स्थान बना लिया है।

भारत में नारी विमर्श ने आधुनिकता के साथ नारी षक्ति को विभिन्न क्षेत्रों में नवीन पहचान दिलायी है। भारत में नारी विमर्श का स्वरुप सामाजिक और सांस्कृतिक परिवर्तनों तक कई पहलुओं को अपने में समाहित किया हुआ है। नारी–विमर्श एक बहु आयमी विचारधारा है। यह नारी जीवन के प्रत्येक क्षेत्र की स्थिति परिस्थिति की जाँच पड़ताल कर नारी की समस्याओं उसके जीवन की व्यथा कथा को अभिव्यक्त करता है। नारी के अस्मिता की पहचान, अस्तित्व बोध, स्व की चिंता करना और अपने अधिकारों के प्रति सचेत करते हुए नारी को जागरुक करता है। प्रभा खेतान कहती हैं कि ''आज स्त्री ने सदियों की खामोशी तोड़ी है। उसकी नियति में बदलाव है। उसके व्यक्तिगत जीवन का उद्देश्य, दर्शन, उसका मन मिज़ाज सभी तो बदल रहा है।'' नारी विमर्श के कारण ही नारी के आत्मविश्वास में वृद्धि हुई है। वह अपनी पहचान बनाते हुए प्रत्येक क्षेत्र में आगे बढ़ रही है। शहर की नारी के साथ–साथ ग्रामीण अंचल की नारियाँ भी चेतना के कारण अपना जीवन सम्मानपूर्वक जी रही हैं। नारी साहित्य लेखन के माध्यम से ही नारी के अस्तित्व, अस्मिता, समानता, स्वतंत्रता और अधिकार के लिए संघर्षनात्मक विचारों का अभ्युदय, नारीत्व षक्ति का प्रस्फुटन और प्रकटिकरण हुआ है। महिला रचनाकारों ने अपने उपन्यास साहित्य में समाज के सभी पक्षों को अतिसूक्ष्मता के साथ चित्रित किया है।

कृष्णा सोबती (18 फरवरी 1925 – 25 जनवरी 2019)

कृष्णा सोबती के लेखन में निरंतर वैविध्य दिखाई देता है। उनका लेखन कार्य अस्तित्ववाद को प्रमुखता देने वाले समय में प्रारंभ हुआ। उनकी रचनाओं में व्यक्ति के प्रति सम्मान की भावना और व्यक्तिवाद की इसी स्वीकृति ने नारी जीवन की स्थिति पर लेखिका ने अपना विचार व्यक्त करना प्रारंभ किया। उनके समय तक नारी को बल बुद्धि और चेतना विहीन माना जाता था। नारी अस्तित्वहीन जीवन जीने के लिए विवश थी। लेखिका ने पहली बार एक स्त्री की दृष्टि से स्त्री की पीड़ा को देखा और उसके अंतर्मन को झांककर मानवीय दृष्टिकोण से दूसरे व्यक्ति को स्त्री के सम्मान और उसके अधिकारों की रक्षा की सहज नैतिक मांग अपने लेखन के माध्यम से करती रहीं हैं। इनके लेखन में स्त्री की एक अलग ही छवि उभर कर सामने आई है। डार से बिछुड़ी, मित्रो मरजानी, ऐ लड़की, सूरजमुखी अंधेरे के इन कृतियों में इनकी नारीवादी चेतना प्रखर रुप में उभर कर सामने आई है। सोबती के उपन्यासों

में औरत कतरा–कतरा जिंदगी जीती, पिसती अपनी अस्मिता के लिए संघर्ष करती है। उसके साथ अमानवीय व्यवहार होता रहा है। स्त्री के प्रति हिंसक, अमानवीय बर्ताव पूर्ण व्यवहार को सोबती ने अपनी लेखनी में दिखाया है तथा इसके लिए पैतृक सत्ता को दोषी ठहराया है, जो उसके प्रति हिंसक दृष्टिकोण रखता आया है (राकेश, 2011)। लेखिका की रचनाओं में नारी के प्रति गहरी संवेदनशीलता है। उन्होंने नारी जीवन के प्रत्येक पहलूओं पर अपनी लेखनी चलाई हैं। उनकी रचनाओं में नारी की एक अलग ही छवि देखने को मिलती है, जो हाशिये पर रही है उनको ही अपनी लेखन का केन्द्र बिन्दू बनाया और नारी के अस्तित्व एवं अस्मिता के प्रति नारी मन में चेतना जागृत किया। लेखिका के रचनाओं के संबंध में राकेश कुमार कहते हैं कि ''वह औरत की जो स्थिति प्रस्तुत करना चाहती है उसके लिए उनके मन में कोई आशंका, संशय या विरोधाभास नहीं हैं। उन्होंने जो कहना चाहा कह दिया, बिना किसी रोक टोक के पूरे नैतिक साहस और संवेदनशीलता के साथ (कुमार राकेश, 2011)।'' लेखिका समाज को नई राह पर ले जाना चाहती हैं जहाँ नारी के विकास मार्ग में पितृसत्तात्मक समाज द्वारा निर्मित रुढ़ जर्जर परंपराओं का बंध न हो और नारी अपना स्वतंत्र होकर अपना विकास कर सके। जैसे–'तीन पहाड़', 'यारों के यार', 'जिन्दगीनामा,' 'मित्रों मरजानी,' 'सूरज अंधेरे के,' 'ऐ लड़की' अपनी रचनाओं में नारी मन को खोल कर रख दिया है जिसमें भावुकता और यथार्थ का सजीव चित्रण देखने को मिलता है। लेखिका ने अपनी रचनाओं में जिस साहस, निर्भीकता और स्पष्टवादिता का परिचय दिया है, उस संदर्भ में डॉ. सुरेन्द्र लिखते हैं कि–''कृष्णा सोबती ने स्त्री होकर, स्त्री को उद्‌घाटित करने का तथा पुरुष को पहचानने का प्रयास किया है। पुरुष जिस क्षेत्र में अपना एकाधिकार समझता आया है, उसमें स्त्री के प्रवेष से उत्पन्न उसकी बौखलाहट स्वाभाविक कही जा सकती है (सिहमार, बलराज. 2002)।'' लेखिका व्यक्तिगत मूल्यों को महत्व देती हैं और परंपरागत रूढ़ियों, मान्यताओं का विरोध करती है।

प्रभा खेतान (01 नवम्बर 1942 – 20 सितम्बर 2008)

बीसवीं सदी के अंतिम दषक में नारीवादी विचारधारा के लेखिका के रुप में प्रभा खेतान अपना महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं। वे अस्तित्ववादी विचारधारा से प्रभावित है, इसलिए उनके लेखन में पाश्चात्य दर्शन का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है। उन्होंने नारी के बहुआयामी संबंधों को सामाजिक और पारिवारिक स्तर पर अत्यंत प्रभावी और सजीवरुप में चित्रित किया है। वह एक संवेदनशील लेखिका है। उन्होंने परंपरा और आधुनिकता के बीच मारवाड़ी समाज की नारी की अस्तित्व एवं अस्मिता की पहचान को अपने साहित्य के माध्यम से व्यक्त किया है। लेखिका नारी की स्वतंत्रता के लिए आर्थिक रुप से सक्षम होने की बात को अत्यंत दृढ़ता के साथ कहती है। आर्थिक स्वतंत्रता ही नारी के अस्तित्व की पहचान के लिए आवश्यक है, ऐसा उनका कहना है। लेखिका अपने उपन्यासों में नारी अस्तित्व को एक नये अंदाज में प्रस्तुत करते हुए नारी चेतना का प्रतिबिम्ब लिए हुए जर्जर होती पुरुषवादी व्यवस्था के खिलाफ आवाज उठाती है। उनकी रचनाओं में महिलाओं के अधिकार सम्पन्नता के प्रश्न और प्रक्रिया को उसके समूचेपन में खिलते–खुलते देखा जा सकता है। प्रभा जी स्वाभिमान और समानता की चाहत से उद्वेलित नारी का मानसिक विश्लेषण करती है और पूरी संवेदना के साथ उपन्यासों में चित्रित करती हैं। लेखिका के उपन्यासों के संबंध में शशिकला त्रिपाठी कहती हैं कि–''प्रभा जी मुक्तिबोध की तरह पहले जीवन में सत्य का साक्षात्कार करती है, तब साहित्य में। शायद यही वजह है कि उनकी रचना आत्मसाक्षात्कार की प्रक्रिया होती है। आओं पेपें घर चलें, अग्निसंभवा, तालाबंदी, छिन्नमस्ता कोई भी उपन्यास क्यों न हो सभी में लेखिका की उरिथति का पूरा–पूरा बोध होता है। ये उपन्यास आत्मकथात्मक उपन्यास होने का भ्रम भी देते हैं (यादव, राजेन्द्र. 1997)।'' लेखिका नारी को आर्थिक क्षेत्र में सक्षम बनने के लिए प्रेरित करती है। उनका मानना है कि आर्थिक रुप से नारी के कमजोर होने पर ही पुरुष अपने अधीन है मानकर उसका हर प्रकार से शोषण करता है। लेखिका ने वर्तमान समय में नारी को अपने अस्तित्व एवं अस्मिता की रक्षा के लिए शिक्षित और अर्थ सम्पन्न होने की आवश्यकता पर जोर दिया है।

मृदुला गर्ग (25 अक्टूबर 1938)

स्वतंत्रता के पश्चात नारी विमर्श पर अपनी लेखनी चलाने वाली बोल्ड लेखिकाओं में इनका नाम शीर्ष पर है।

लेखिका अपनी रचनाओं में नारी जीवन की कठोर वास्तविकताओं और विविध समस्याओं को उजागर करती हैं। लेखिका संघर्ष को जीवन का अनिवार्य अंग मानती है। इनकी रचनाओं के कुछ नारी पात्र उग्र है जो अपने जीवन के प्रति सर्तक है अपना जीवन अपनी शर्तों पर जीना चाहती हैं। लेखिका ने अपने उपन्यासों में सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, धार्मिक, नैतिक और व्यक्तिगत समस्याओं का यथार्थ और सटीक चित्रण किया है। इनके उपन्यासों में 'वंषज' (1971), 'चितकोबरा' (1974), 'उसके हिस्से की धूप' (1975), 'अनित्य' (1980), आदि महत्वपूर्ण है। लेखिका परंपरागत मूल्यों में विश्वास नहीं करती किन्तु मानवीय मूल्यों को स्वीकार करती है। सामाजिक मूल्यों का महत्व स्वीकार करती है तथा व्यक्तिगत मूल्यों को तभी तक उचित मानती है जब तक समाज के विकास मार्ग में बाधा उत्पन्न नहीं होती। परंतु जो मूल्य अपनी महत्ता खो चुके हैं, उन्हें लेखिका त्यागने के लिए प्रेरित करती है। लेखिका अपने उपन्यासों में स्त्री–पुरुष संबंध, प्रेम, यौन भावना आदि के संबंध में व्यक्तिगत मूल्यों को महत्व देती है।

मैत्रेयी पुष्पा (30 नवम्बर 1944)

मैत्रेयी पुष्पा एक मानवतावादी दृष्टिकोण रखने वाली लेखिका हैं। उनकी रचनाओं का केन्द्र बिन्दु ग्रामीण नारी और नारी समस्या है। उनकी रचनाओं की पृष्ठभूमि बुन्देलखण्ड और ब्रज प्रदेश है, वहाँ के परिवेश में व्याप्त सामाजिक कुरीतियों पर अपनी लेखनी चलाई हैं। उन्होंने अपनी रचनाओं में नारी जीवन के जिस यथार्थ को प्रस्तुत किया है उस संदर्भ में गोपाल राय लिखते है कि–''मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में बुन्देलखण्ड और ब्रज क्षेत्र के जाट–किसानों तथा दलितों के जीवन का प्रामाणिक अंकन हुआ है, इन उपन्यासों का केन्द्रीय विषय ग्रामीण परिवेश में उभरती नारी–चेतना ही है (राय, 2003)।'' मैत्रेयी जी की नारी ग्रामीण परिवेश में सामंती अन्याय, अत्याचार और शोषण के विरुद्ध अपने लोकतांत्रिक जीवन की आकांक्षाओं की लड़ाई लड़ती हैं। लेखिका नारी की अनकही दुःख दर्द पीड़ा को ही व्यक्त नहीं करती हैं बल्कि उन्होंने नारी जीवन की उन आयामों को भी प्रस्तुत किया है जिसे व्यक्त करने का साहस किसी में नहीं रहा है। लेखिका के नारी पात्र पुरुषवादी समाज द्वारा निर्मित नैतिकता–अनैतिकता और रीति–रीवाजों के सारे मापदण्ड को चुनौतियां देती हैं। राजेन्द्र यादव लिखते हैं कि–''स्त्री को कमर के ऊपर और नीचे बाँट देना ही पुरुष साजिश का शिकार होना है– यानि देवी और वेश्या का ध्रुवीकरण। मैत्रेयी की कथा नारियाँ इस मिथ को तोड़ती हैं और अपनी पूरी शरीरिकता के साथ जीने के संकल्प को ही अपना कथ्य बनाती हैं। उनकी गोभा, मन्दा, सारंग नैनी जिजीविषा की ऐसी दबंग अभिव्यक्ति है, जहाँ शील–अश्लील, नैतिक–अनैतिक की धारणाएँ सहज हीं कैंचुली की तरह उतर जाती हैं (यादव 2014)।'' लेखिका का मानना है कि जब तक नारी के हाथ में सत्ता की बाग डोर नही आयेगी तब तक पुरुष उसका शोषण करता रहेगा। नारी को अपने अधिकारों के प्रति सजग होने की आवश्यकता है, और नारी शक्ति को अब दिखाने की जरुरत है।

उषा प्रियंवदा (24 दिसम्बर 1930)

आधुनिक लेखिकाओं में उषा प्रियंवदा का नाम महत्वपूर्ण और बहुचर्चित है। नारी को केन्द्र में रखकर लेखन करना और उनकी समस्याओं को समाज के सामने लाकर सामाजिक परिवर्तन करने का प्रयास इन्होंने किया है। इनकी रचनाओं में अस्तित्व बोध, छटपटाहट, एकाकीपन की भावना प्रमुख रुप से उभर कर आई है। इनके नारी पात्र व्यक्तित्व और अस्तित्व पर थोपे जाने वाले परंपरागत नैतिक मूल्यों को स्वीकार नहीं करती है और मानव–मूल्य को स्थापित करने के लिए संघर्ष करती हैं। 'पचपन खम्भे' 'लाल दिवारें,' 'रुकोगी नहीं राधिका,' 'शेषयात्रा' ये सभी उपन्यास नारी जीवन की कथा–व्यथा को अभिव्यक्त करते हैं। इनका नारीवादी साहित्यिक लेखन असाधारण है।

ममता कालिया (02 नवम्बर 1940)

ममता कालिया ने भारतीय नारी और उनकी समस्याओं को अपनी रचना प्रक्रिया का केन्द्र बिन्दु बनाया है। उनका समग्र लेखन नारी के ईद–गिर्द घूमता है। उनके नारी पात्र संघर्षशील है और वे अपने विकास के लिए निरंतर प्रयासरत हैं। अपने उपन्यासों में पारिवारिक जीवन की निराषाओं, घुटन, कुंठाओं, अर्न्तविरोधों तथा विषमताओं का यथार्थ चित्रण किया है। जैसे–बेघर, नरक–दर–नरक उनकी काफी चर्चित और प्रसिद्ध उपन्यास है। लेखिका पारंपरिक धार्मिक मूल्यों पर कठोर प्रहार करती है और कहती है कि नारी के विकास में धर्म भी बाधा उत्पन्न करता

है। धर्म के कारण नारी अपनी स्वतंत्रता के बारे में सोच नहीं पाती है। धार्मिक मान्यता ही उसे जंजीर में जकड़ कर रखती है। नारी को अपने अस्तित्व का भान होना चाहिए जिससे वह अपने अस्तित्व को एक ऊंचाई दे सकती है जो उसका जन्मसिद्ध अधिकार है।

निष्कर्ष

महिला उपन्यासकारों के साहित्य का विश्लेषण करने से ज्ञात होता है कि लेखिकाओं ने अपने लेखन से साहित्य में अपना स्थान बनाने के साथ ही नारी के प्रति समाज के पारंपरिक दृष्टिकोण में भी परिवर्तन लाने का सफल प्रयास किया है। महिला लेखन को पूर्व में साहित्य जगत में सम्मानपूर्व उचित स्थान प्राप्त नहीं हुआ था किन्तु वर्तमान में इन्हीं लेखिकाओं के गंभीर और वास्तविकता पूर्ण नारीवादी लेखन के कारण हिन्दी साहित्य जगत के मुख्यधारा में अपना स्थान बनाया है। ये लेखिकायें अलग–अलग सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक परिवेश से आयी हैं किन्तु नारीवादी विचारधाराओं से महिला उत्थान और सशक्तिकरण का मार्ग प्रषस्त करने में इन लेखिकाओं में कुछ समानताऐं दिखाई देती है।

संदर्भ सूची

1. कुमार राकेष, (2011) *नारीवादी विमर्श,* आधार पब्लिकेशंस, पंचकूला, हरियाणा, पृ. 206।
2. खेतान, प्रभा (2008) *स्त्री उपेक्षिता,* राजकमल, प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 23।
3. खैरनार राजेन्द्र (2016) *इक्कीसवीं सदी की हिन्दी कहानी में स्त्री विमर्श और दलित विमर्श,* इलाहाबाद प्रकाशन, दिल्ली, पृ. 62.
4. धवन मधु, संपा. (2012) *नारी लेखन और समकालीन समाज,* क्लासिकल पब्लिशिंग, नई दिल्ली, पृ. 33।
5. पद्मावती, जी (2021) *इक्कीसवीं सदी की लेखिकाओं की कहानियों में स्त्री विमर्श,* विकास प्रकाशन, कानपुर, पृ. 17।
6. यादव, राजेन्द्र. संपादक. (अक्टूबर,1997) *हंस,* राजकमल, प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 139।
7. यादव राजेन्द्र (2014) *आदमी की निगाह में औरत,* राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 170।
8. सिहमार, बलराज (2002) *मानव मूल्य और स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास,* खामा पब्लिशर्स, दिल्ली, पृ. 167।

****